बिहार में असहयोग आंदोलन और किसानों : सन्दर्भ और मुद्दे

डॉ० नेहा कुमारी*

1919 के आरंभ तक अखिल–भारतीय राजनीति में गाँधीजी का हस्तक्षेप अपेक्षाकृत कम रहा। यह एनी बेसेंट को नजरबंद किए जाने के विरोध एवं अली बंधुओं की रिहाई की बारंबार मांग तक ही सीमित रहा (जिनके माध्यम से वे पहले ही लखनऊ के अब्दुल बारी जैसे मुसलमान धार्मिक नेताओं के साथ संपर्क स्थापित करते आ रहे थे)। उन्होंने सुधार–प्रस्तावों में भी कोई खास दिलचस्पी नहीं ली, जबकि अधिकांश दूसरे राजनीतिज्ञों का ध्यान इन्हीं में लगा हुआ था। लेकिन फरवरी 1919 में रौलट एक्ट के पारित होने के फलस्वरूप जो उत्तेजना फैली, उसके चलते उन्होंने पहली बार एक अखिल–भारतीय सत्याग्रह आंदोलन आरंभ किया।

6 अप्रैल 1919 को पटना में एक जबर्दस्त हड़ताल हुई। सभी दुकानें बंद हो गई। बिहार के अन्य शहारों, जैसे–छपरा, मुजफ्फरपुर, मुंगेर, गया,झरिया आदि स्थानों में भी पूर्ण हड़ताल तथा शांतिपूर्ण प्रदर्शन हुए। सवारियों का चलना बंद था। गाँव के लोगों ने तो बैलगाड़ी चलना तथा हल जोतना भी उस दिन बन्द कर दिया था।[1]

दिल्ली, पंजाब, अमृतसर, कसूर, गुजरवाला आदि स्थानों में सरकार का दमन–चक्र तेजी से चलता रहा, जिसमें कितने लोग मौत के घाट उतारे गये। पंजाब के जनप्रिय नेता डॉ. किचलू तथा डॉ. सत्यपाल को गिरफ्तार कर पंजाब के बाहर भेज दिया गया। गाँधीजी को जब इस बात का पता चला, तब वे पंजाब की ओर चल पड़े, परन्तु उन्हें भी रास्ते में ही गिरतार कर बम्बई भेज दिया गया।

इन घटनाओं के विरोध में 13 अप्रैल को अमृतसर के निवासी जब जालियाँवाला बाग में शांतिपूर्वक एक सभा कर रहे थे, उसी समय जनरल डायर ने 100 भारतीय तथा 50 गोरे सिपाहियों के साथ वहाँ पहुँचकर, लोगों को बिना चेतावनी दिए ही, गोली चलाने का आदेश दे दिया। 1650 चक्र गोलियाँ चलीं, जिसमें 379 आदमी मरे तथा 1137 घायल हुए। जब कारतूस समाप्त हो गयी, तभी गोली का चलना बन्द हुआ। सरकार ने इस समाचार के फैलने पर रोक लगा दी। इसकी जानकारी लोगों को तब हुई, जब महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इस हत्याकाण्ड के विरोध में अपनी 'सर' की उपाधि वापस कर दी तथा शंकरन नायर ने वायसराय की कार्यकारिणी परिषद् से त्यागपत्र दे दिया।

***एम.ए.,पीएच.डी. इतिहास, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।**

पटना में 11 अप्रैल को महात्मा गाँधी की गिरतारी के विरूद्ध हसन इमाम की अध्यक्षता में एक सभा हुई, जिसमें राजेन्द्र प्रसाद के पास भेजे गये महात्मा गाँधी के सत्याग्रह–प्रतिज्ञा–पत्र के महत्व को समझाया गया। प्रतिज्ञा–पत्र गाँधीजी ने वैसे सत्याग्रहियों के हस्ताक्षर के लिये भेजे थे, जो इस बात के लिये तैयार हों कि वे अहिंसा का पालन करते हुए सरकार के वैसे कानूनों की अवज्ञा करेंगे, जिन्हें तोड़ने की अनुमति एक मनोनीत समिति देगी तथा उसके लिए जो सजा होगी, उसे प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करेंगे। सबसे पहले इस पर हसन इमाम ने हस्ताक्षर किया[2] तथा उसके बाद मजहरूल हक, राजेन्द्र प्रसाद, चन्द्रवंशी सहाय आदि अन्य नेतागण।

जालियाँवाला बाग हत्याकाण्ड की खबर बिहार में कुछ महीने बाद मिली जिसकी भर्त्सना 17–18 अगस्त, 1919 ई. को बिहार प्रदेश कांग्रेस की बैठक में की गयी। इस संबंध में अनुग्रह नारायण सिंह ने इस तरह लिखा है, ''रॉलेट–एक्ट आन्दोलन को लेकर जो हत्याकाण्ड अमृतसर और लाहौर में हुआ तथा जालियाँबाला बाग में जिस निर्दयता के साथ लोग मारे गए, उनकी खबरें उड़ती–उड़ती पहुंचने लगी थीं, परन्तु उनको विशेष जानकारी नहीं हो पाई थी। कई महीनों बाद, जब विस्तृत समाचार लोगों को मिलने लगे और अखबारों तथा व्यवस्थापिका सभा में इस विषय पर वाद–प्रतिवाद होने लगे, तब उसकी भयानकता का पता हमलोगों को मालूम होने लगा।''

इधर प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद अंग्रेजों ने युद्धकाल में मुसलमानों को दिए गए अपने वायदों को भंग कर दिया। युद्ध के दौरान भारतीय मुसलमानों को वचन दिया गया था कि ब्रिटिश सरकार खिलाफत की रक्षा करेगी और मेसोपोटामिया, अरेबिया और फिलस्तीन खलीफा के ही अधीन रहेंगे। परन्तु युद्ध के पश्चात् सेवरिस संधि द्वारा तुर्क साम्राज्य का विघटन कर दिया गया। इस संबंध में 19 जनवरी, 1920 ई. को अली बन्धुओं तथा महात्मा गाँधी के नेतृत्व में एक शिष्टमंडल वायसराय से मिला और ब्रिटिश सरकार के वचन–भंग की तरफ उनका ध्यान आकृष्ट किया, परन्तु इसका कोई परिणाम नहीं निकला। फरवरी, 1920 ई. में मुहम्मद अली के नेतृत्व में दूसरा शिष्टमंडल इंगलैण्ड गया और तत्कालीन प्रधानमंत्री लॉयड जार्ज के सामने क्षोभ प्रदर्शित किया। परन्तु, वह भी व्यर्थ साबित हुआ।[3]

अप्रैल, 1920 ई. में पटना की एक सार्वजनिक सभा में मौलवी शौकत अली का भाषण हुआ, जहाँ असहयोग का एक कार्यक्रम भी तैयार किया गया। असहयोग के समर्थकों में ब्रजकिशोर प्रसाद, राजेन्द्र प्रसाद, धरणीधर प्रसाद, मजहरूल हक, शाह मुहम्मद जुबैर, मौलवी मुहम्मद शफी तथा मौलाना नुरुल हसन थे। परन्तु हसन इमाम, नवाब सरफराज हुसेन खाँ तथा सच्चिदानन्द सिन्हा असहयोग के पक्षपाती नहीं थे। फिर भी, बिहार प्रदेश की यह खूबी थी कि मतभेदों के बावजूद आपस में प्रेम–व्यवहार ज्यों–का–त्यों बना रहा।

अगस्त, 1920 ई. बिहार प्रांतीय राजनीतिक सम्मेलन की बैठक भागलपुर में हुई, जिसके सभापति राजेन्द्र प्रसाद थे। इस अवसर पर गाँधीजी ने तार द्वारा यह सूचना दी कि सम्मेलन असहयोग आन्दोलन का समर्थन करे, जिसका कारण पंजाब हत्याकाण्ड तथा खिलाफत था। परन्तु, ब्रजकिशोर प्रसाद के सुझाव पर असहयोग के कारणों में स्वराज्य भी जोड़ दिया गया। भागलपुर सम्मेलन के दो–तीन दिन पहले गुजरात प्रांतीय राजनीतिक सम्मेलन ने भी असहयोग का समर्थन किया था। इस तरह पूरे देश में केवल गुजरात और बिहार ही ऐसे दो प्रांत थे, जिन्होंने प्रांतीय सम्मेलन में कलकत्ता अधिवेशन के पूर्व ही असहयोग का समर्थन किया था।

सच्चिदानन्द सिन्हा तथा हसन इमाम ने 1918 ई. से ही पटना से सर्चलाईट निकालना प्रारंभ किया था। परन्तु, चूँकि यह अखबार असहयोग का समर्थक नहीं था, इसलिये 1920 ई. में सर्चलाईट प्रेस से ही राजेन्द्र प्रसाद ने एक हिन्दी साप्ताहिक देश का प्रकाशन प्रारंभ किया, जिसके सम्पादक वे स्वयं थे। देश असहयोग का समर्थक था। राजेन्द्र प्रसाद ने हसन इमाम तथा सच्चिदानन्द सिन्हा से यह समझौता किया था कि अपने सम्पादकीय लेखों में सर्चलाइट न तो असहयोग का समर्थन करेगा, न विरोध। फिर भी, अन्य लोगों का लेख, चाहे वह असहयोग के पक्ष में होगा या विपक्ष में प्रकाशित करेगा।[4]

इसी बीच बिहार के जनकधारी प्रसाद ने गाँधीजी को एक पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने असहयोग–सम्बन्धी कुछ चिंता व्यक्त की थी। जनकधारी प्रसाद की महत्वपूर्ण शंका यह थी कि अहिंसात्मक ढंग से चलाये गये असहयोग आंदोलन में हिंसा की कुछ संभावना रह जाती है, क्योंकि भावावेश में आकर कोई भी आदमी हिंसा पर उतारू हो सकता है। गाँधीजी ने जनकधारी प्रसाद के प्रश्नों के उत्तर 15 दिसम्बर, 1920 ई. के यंग इंडिया में प्रकाशित किया। अपनी सहमति व्यक्त करते हुए गाँधीजी ने जबाव दिया था कि निश्चय ही अहिंसात्मक आन्दोलन के हिंसात्मक होने की संभावना रहती है, परन्तु जिस तरह स्वाधीनता के दुरूपयोग के खतरे से डरकर स्वाधीनता आन्दोलन से पीछे नहीं हटा जा सकता, उसी प्रकार किसी अहिंसात्मक आन्दोलन के आगे चलकर हिंसात्मक होने की संभावना से डरकर उसे बन्द नहीं किया जा सकता।[5]

असहयोग आन्दोलन के दौरान बिहार में मजहरूल हक, राजेन्द्र प्रसाद, ब्रजकिशोर प्रसाद, गोरख प्रसाद, धरणीधर प्रसाद तथा मुहम्मद शफी परिषद् की उम्मीदवारी से हट गए। अपनी उम्मीदवारी वापस लेते हुए मौलाना मजहरूल हक ने कहा कि एक मुसलमान के नाते वे उस सरकार से सहयोग नहीं कर सकते, जो इस्लाम को बरबाद करने पर तुली हो तथा एक हिन्दू के रूप में भी वे उस सरकार से सहयोग नहीं करेंगे, जिसके हाथ पंजाबी भाईयों के खून से रंगे हों।

छपरा के अवैतनिक दण्डाधिकारी महेन्द्र प्रसाद ने अपने पद से त्याग–पत्र दे दिया। नागपुर प्रस्ताव के अनुसार अनुग्रह नारायण सिंह तथा ब्रजनन्दन प्रसाद ने अपनी वकालत छोड़ दी। वकालत छोड़नेवाले अन्य लोगों में पटना से मो. खुरशेद हसनैन, गया से कृष्णप्रकाश सेन सिंह, मुकुटधारी प्रसाद, छपरा से जकरिया हुसेन हाशमी, मथुरा प्रसाद, विंधेश्वर प्रसाद, रामदयालु सिंह, रामवनमी प्रसाद, दरभंगा से ब्रजकिशोर प्रसाद, धरणीधर, मोतिहारी से गोरख प्रसाद, भागलपुर से दीपनारायण सिंह, मुंगेर से श्रीकृष्ण सिंह, तेजेश्वर सिंह, नेमधारी सिंह, पुरुलिया से अतुलचन्द्र घोष, हजारीबाग से रामनारायण सिंह तथा पलामू से शेख साहब थे।

प्रसंगवश, यहाँ यह याद दिलाना जरूरी है कि 1919 और 1923 के दरम्यान उत्तरी बिहार में प्लांटर्स के विरूद्ध बहुत से आंदोलन हुए। लेकिन उसके लिए कांग्रेस का समर्थन नहीं था। धनी किसानों और फैक्टरी के अमला रह चुके लोगों ने आंदोलन की अगुआई की। इस आंदोलन को मझोले और गरीब किसानों का भी समर्थन हासिल था जब कि वे गरीब किसान फैक्टरी अमला के जुल्म झेल चुके थे।[6]

यहाँ इस तथ्य को रेखांकित करना प्रासंगिक जान पड़ता है कि चंपारण सत्याग्रह और होमरूल मूवमेंट के बाद कांग्रेस ने अनेकों किसान सभाएं स्थापित की ताकि किसानों की परेशानियों पर ध्यान दिया जा सके। राजेन्द्र प्रसाद ने कथनानुसार संविधान में परिवर्तन कर दिए जाने से उन्हें काफी प्रोत्साहन मिला। उन्होंने जमींदार प्लांटर्स के बीच ताल–मेल बैठाने की कोशिशें की। स्थायी बंदोबस्त के विरूद्ध प्रस्तावित कानून का विरोध करने के लिए नवंबर 1919 में जमींदार व प्लांटर्स का एक सुंयक्त संगठन बनाया गया जिसके अध्यक्ष थे दरभंगा के महाराजा।

इस बात के मद्देयनजर राजेन्द्र प्रसाद ने यह गारंटी दी कि ''कांग्रेस का सबसे योग्य और सक्षम कार्यकर्त्ता स्थायी बंदोवस्त पर किसी भी तरह के हमले का विरोध करेगा।'' इसमें दो राय नहीं कि इस मामले पर कुछ लोग परस्पर विरोध–रुख अख्तियार किए हुए हैं। इस संघर्ष में जो लोग कुछ मदद कर सकते हैं वे जल्द से जल्द आगे आएं, नहीं तो बहुत देर हो जाएगी।[7]

प्रसाद ने इस बात का विस्तृत उल्लेख किया किया कि जो लोग पहले छोटे जमींदार थे, वे ही आज शिक्षित वर्ग हैं। इनकी उस बंदोबस्त को अस्त–व्यस्त करने के व्यर्थ के काम में काई 'खास दिलचस्पी' नहीं है, चूंकि जमींदारों और 'शिक्षित वर्ग' में कोई द्वन्द्व नहीं है। इसलिए यह गठजोड़ किसी 'परछाई' से लड़ रहा है। यदि उसे नहीं तोड़ा गया तो यह 'शिक्षित वर्ग' (यानि कि छोटे जमींदार) और असामियों को जमींदारों के खिलाफ भड़काएगा।

1919 में रौलट सत्याग्रह के दौरान गाँधी के प्रति जनता की सहानुभूति बहत 'सघन और व्यापक' थी। लोग अंग्रेजों को भारत से खदेड़ देने की बातें खुलकर कर रहे थे। यह भी कहा जा रहा था कि सरकारी कर्मचारियों और पुलिस

से बात करके उन्हें अपने पक्ष में कर लिया गया था। मुंगेर और शाहाबाद के वकीलों ने भी बहुत अहम भूमिका अदा की । उन्होंने अपने मुवक्किलों के जरिए हर तरह की अफवाहें, फैलाई। बेतिया राज के गुदरी बाजार में दुकानें बंद रही, धनबाद में रह रहे कच्छ मारवाड़ी और पंजाबी के लोगों ने भी सत्याग्रह का समर्थन किया। झरिया, करकेन्द्र और कटरा में आम हड़तालें हुई। कुछ खदानों में लोगों ने कोयल लादने का काम अपने–आप बंद कर दिया। यह आंदोलन झरिया से हजारीबाग में इसरी तक फैल गया। कुछ ऐसी भी मनगढंत कहानियां सुनने में आ रही थीं जिससे यह लग रहा था कि मुसलमानों को सत्याग्रह में हिस्सा लेने के लिए जान–बूझकर ऐसा किया जा रहा था (जैसे कि यह अफवाह फैली हुई थी कि अंग्रेजों की मंशा धार्मिक शहरों में सूअर का मांस परोसने वाले होटल खोलने की है) यद्यपि छोटे मौलवी उत्तर प्रदेश के मौलानाओं से संपर्क में थे। लेकिन फुलवारी के मौलाना और वेहाबी मौलाना फिरंगी महल उलेमाओं के विरूद्ध थे। वे नहीं चाहते थे कि मुसलमान सत्याग्रह में हिस्सा लें।

1920 के शुरू में दरभंगा के महाराजा ने कुछ रियायतें दी। लेकिन ये रियायतें केवल संपन्न असामियों के लिए ही थीं। सारण में एक कब्जेदार संपन्न असामी के पुत्र विद्यानंद 1917 के गाँधी के सत्याग्रह से बहुत प्रभावित हुए (हालांकि गाँधी ने उसके साथ किसी संबंध से इंकार किया)। 1919 और 1920 में दरभंगा राज में एक जबरदस्त आंदोलन में वे संपन्न असामियों के परम्परागत अधिकारों की ही बात करते थे। उन्हें मध्य और निचली जातियों के मझौले और गरीब किसानों का भरपुर समर्थन मिला। क्योंकि ये लोग 'अमला' दमन से बुरी तरह पीड़ित थे। शुरू–शुरू में कांग्रेस ने भी विद्यानंद को समर्थन दिया, लेकिन बाद में समर्थन देना बंद कर दिया। इसकी वजह यह बताई गई कि वह ग्रामीणों में एकता बनाए रखना चाहती है। अप्रैल 1920 में विद्यानंद ने एक मुहिम चलाई कि दरभंगा राज के असामियों की समस्याएं सुलझाने के लिए एक समिति बनाई जाए। लेकिन राजेन्द्र प्रसाद ने इसका विरोध किया क्योंकि उनके अनुसार वह विश्वास करने लायक नहीं था। हालांकि विद्यानंद द्वारा जमा किए गए तथ्यों का दरभंगा जिला कांग्रेस कमेटी ने मुआयना किया (विद्यानंद ने 100 गवाहों से 13 घंटे बात की थी) लेकिन उस रिपोर्ट को दरभंगा जिला कांग्रेस की मीटिंग में पढ़ा भी नहीं गया।[8] ऐसा लगता है कि कांग्रेस की किसान सभाएं केवल चम्पारण में ही केन्द्रित रहीं। इन सभाओं की स्थापना गोरख प्रसाद की पहल पर हुई। वे ही मोतिहारी, केसरिया और मेहसी की सभाओं के अध्यक्ष थे। इनमें से पहली दो सभाओं में 50–50 सदस्य थे और तीसरी में 100 सदस्य। बेतिया कस्बा और मचेरगांव की सभाओं में क्रमशः दस और सदस्य ही थे। चम्पारण में अपने अनुभव के आधार पर गोरख प्रसाद ने टिनैंसी एक्ट में कुछ संशोधन करने के सुझाव दिए जो उनके कथनानुसार 'अत्यंत'

आवश्यक थे। ये संशोधन कब्जेदार असामियों से संबंधित थे (मसलन, नामांतरण शुल्क निर्धारित करना, कब्जे का हस्तांरण, लकड़ी का अधिकार आदि)। उन्होंने यह भी कहा कि उनके सुझाावों को जमींदारी की मुखालफत न समझा जाए क्योंकि अब समय एक जुट होने का आ गया है।

बिहार प्रादेशिक सम्मेलन में राजेन्द्र प्रसाद ने कृषि के सवाल पर कांग्रेस के रूख को जोरदार शब्दों में दुहरायाः ''हर एक कांग्रेसी का यह कर्त्तव्य है कि जरूरत की घड़ी में वह आततायी भू–स्वामियों के खिलाफ रैयतों की मदद करे। जहां रैयत आक्रामक हो गए हो वहाँ जमींदारों को समर्थन दें। हमारी विलक्षण सामाजिक संरचना के विविध तत्वों को 'उचित' स्थान पर रख कर ही समाज में सद्भावना बनाए रखी जा सकती है। हमारा संगठन केवल रैयतों के लिए है।''[9] यह बात साफतौर पर कही गई कि रैयत कांग्रेस की सभाओं में आते रहें ताकि उनकी परेशानियों का पता लगता रहे। लेकिन वे तुरंत किसी हल की उम्मीद न करें। खैर, किसान प्रतिनिधियों के वोट की बदौलत ही बिहार प्रादेशिक सम्मेलन में 'असहयोग' का प्रस्ताव पारित हो सका।

निष्कर्ष –जहॉ तक असहयोग आन्दोलन और किसानों के मुद्दे का सवाल है तो बिहार के भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में इस आंदोलन के अलग–अलग रूप रहे। नवम्बर 1921 में चम्पारण में मोतिहारी के निकट चराई के अधिकार को लेकर हुए विवाद के फलस्वरूप चौतरवा नील कारखाने को आग लगा दी गई, जबकि मुजफ्फरपुर का सीतामढ़ी उपसंभाग तूफान के केन्द्र के रूप में विख्यात हुआ और वहां जनवरी 1922 में करों की नाअदायगी के संभावित आंदोलन को रोकने के लिए दंड देने के आदेश से लैस पुलिस बल को भेजा गया। किन्तु वैसा जमींदार–विरोधी किसान आंदोलन फिर नहीं हुआ जिसने 1920 में दरभंगा रियासत की नाक में दम कर दिया था और जिससे बिहार कांग्रेस के नेताओं ने अपने–आपको अलग कर लिया था।

संदर्भ सूची

1. ज्यूडिथ ब्राउन, गाँधीज राईज टू पॉवर : इंडियन पॉलिटिक्स, 1915–1922, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1972, पृ.125.
2. उपरोक्त.
3. और ब्यौरें के लिए देखें वांधोपाध्याय, शेखर पलासी से विभाजन तक, ओरियंट लॉग्मैन, हैदराबाद, 2007, पृ. 310–311.
4. उपरोक्त. 5. उपरोक्त.
6. रवींदर कुमार, एस्से इन द सोशल हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न इंडिया, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली, 1983, पृ.26–31 7.उपरोक्त.
8. सुमित सरकार, मार्डन इंडिया, मैकमिलन, नई दिल्ली, 1983, पृ. 174 में उद्धृत.
9. ब्राउन (1972), पूर्वोक्त, पृ. 46.